दि० २५/०१/२०२३.

प्रो० एस. एस. धोंगडे,
सहा. प्रोफेसर हिन्दी विभाग.
सेवा दि० 06/01/1998 पासून आज पर्यंत.

अ. क्र.	शै. वर्ष.	शोधनिबंधाचे नांव व पान नं.	जर्नल/पुस्तकाचे नाव	कॉन्फरस/सेमीनार व आयोजक महाविद्यालय	ISSN/ISBN UGC Care	इम्पॅक्ट फॅक्टर
1	2	3	4	5	6	7
01	सन- 2021-2022	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का हिन्दी दलित साहित्य पर प्रभाव पान नं- 146 ते 151.	B. Aadhar. "C" valum.	'राष्ट्रीय परिषद' श्री. मनोहर हरि खापर्डे कॉलेज ऑफ आर्ट्स अँड कॉमर्स, प्रभाग-राजपारडा	ISSN:- 2278-9308- September-2021	7.675

(Dhongade)
प्रा. एस. एस. धोंगडे).

B.Aadhar International Peer-Reviewed Indexed Research Journal
Impact Factor -(SJIF) -7.675,Issue NO, 318 (CCCXVIII) C
ISSN : 2278-9308
September, 2021

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का हिंदी दलित साहित्य पर प्रभाव

प्रा. सुभाष सिताराम धोंगडे
हिंदि विभाग श्री. मनोहर हरी खापणे कॉलेज ऑफ आर्टस अँड कॉमर्स पाचल,
ता. राजापूर, जि. रत्नागिरी. मोबा. ९४०३६२८८४०

प्रस्तावना-

भारतरत्न डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर एक वास्तववादी विचारक है। जो पहले समाजसुधारक है, और उसके साथ ही साथ बॅरीस्टर, लेखक, क्रांतिकारी, शिक्षाप्रेमी, कृषितज्ञ, अर्थतज्ञ, राजनेता और सिम्बॉल ऑफ नॉलेज थे। उन्होंने अपने पूरे जीवन में अनेक अनुभव पाएँ और अपनी अनुभूती एवं ज्ञान के आधार पर समाज और देश के अनेक पहलूओं कि और देखा, परखा और पुनः समाज के सामने रखा। तथा समाज के लिए सही मार्गदर्शन भी किया। उनकी विचार प्रक्रिया से समाज और जनता का कोई भी विषय नही छूटा। चाहे वह धर्म, राजनीति, अर्थनीति, समाज, नारी, विषयक दृष्टिकोन, कृषिनीति, परराष्ट्र व्यवहार, पत्रकारिता, साहित्य निर्माण, जलनिती, आदी। उनके ज्ञान, विचार और अध्ययन का परमोच्च बिंदू है –'भारतीय संविधान'। भारतीय संविधान उनकी एक ऐसी निर्मिती है जिसका महत्व आजतक एवं आगे चलकर सदियों तक कोई नकार नही सकता। अतः ऐसे विद्वान उच्च विद्याविभूषित, उच्च शिक्षित, प्रकाड पंडीत, लेखक तथा एक सच्चे पाठक एवं शिक्षा प्रेमी, ज्ञानपिपासू, महान व्यक्तित्व अम्बेडकरजी का साहित्य पर प्रभाव पडना स्वाभाविक है। वैसे देखा जाएँ तो पहले पहल डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरजी के विचाराओं से मराठी साहित्य प्रभावित हुआ। क्योंकि उनेक आन्दोलनों की शुरूवात महाराष्ट्र से ही हुई थी। उनके विचारों से प्रेरणा ले कर मराठी साहित्य के अनेक विधाओं में साहित्य लेखन की प्रक्रिया शुरू हुई। जिसमें मराठी का कथा, काव्य, नाटक, आत्मचरित्र आदी साहित्य की लेखन कि प्रक्रिया शुरू हुई। जिसमें मराठी के कही लेखकों के नाम लिए जाते है। जैसे – म. भि. चिटणीस, कि. का. बनसाड, डॉ. गंगाधर पानतावणे, प्रेमानन्द गजवी, दत्ता भगत रामनाथ चौहान, अविनाश डोळस, संजय पवार, कुशाल कांबळे, श्री. हीरा बनसोड, बाबूराव बागूल, केशव मेश्राम, मधुकर गायकवाड, शंकरराव खरात, नामदेव ढसाळ, महादेव कोंडविलकर, अशोक हरकर, बंधू माधव, वामन होवाळ आदी। जिस तरह से मराठी साहित्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरजी के विचारों से प्रभावित हुआ वैसेही हिन्दी साहित्य भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। मराठी साहित्य में जिस साहित्य को 'दलित साहित्य' कहते है उसेही हिन्दी साहित्य मे भी 'दलित साहित्य', 'दलित चेतना', 'दलित विमर्श' कहते है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरजी के विचारों से प्रभावित होकर हिन्दी के भी साहित्य में कविता, कथा, उपन्यास, आत्मचरित्र एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में लेखन होता रहा है। जो कल्पना विलास से दूर एवं वास्तववादी एवं क्रांतिकारी विचारों का साहित्य निर्माण हो रहा है।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर पूर्व भारतिय समाज की स्थिती –

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के कार्य और उनके प्रभाव को देखने से पहले हमे भारत की पूर्वपिठिका देखनी होगी। भारत के इतिहास में सिंधु संस्कृति का उदय इ.स.पू. ३५०० वर्ष देखा गया है। उसके पश्चात विकास काल आता है। जो इ.स.पू. २५०० वर्ष तक आता है। तथा इसके बाद इ.स. पूर्व १५०० वर्ष पहले वैदिक काल की शुरूआत देखी गई है। इस वैदिक काल को दो भागों में विभाजित किया जाता है। (१) पूर्व वैदिक काल – यह काल आर्यों का काल माना जाता है तथा इस काल को वैदिक संस्कृत भाषा का काल भी माना जाता है। और (२) उत्तर वैदिक काल– इस काल में वर्ण व्यवस्था का समर्थन करनेवाला मनस्मृति जैसा ग्रंथ निर्माण हुआ। इसी काल में वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत समाज का विभाजन किया गया।

यहाँ का समाज ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ऐसे चार वर्णों में विभाजित हुआ। इस काल में इन चार वर्णों में लोगों के काम निर्धारित किए गए। तथा उच्च, निच्च, जॉति-पाँति का बीजवपन किया गया। ऐसे विनाशकारी, जॉति-पाँति के बोए बीज आजतक समाप्त नही हो सके। इस विभेद को नष्ट करने के लिए बहुत सारे संत महात्माओं ने प्रयास किए लेकिन यह जहर पुरी तरह से नष्ट नहि कर सके। यह सब करते हुऐ उन्हें अनेक संकटो का सामना करना पडा। फिर भी इस कार्य में सफल न हो सके। जिनमें प्रमुख रूप से – संत कबीर, संत रैदास, दादू दयाल तथा बाबा पद्मजी, विष्णू बुवा ब्रम्हचारी, भिकोबा दादा चव्हाण, रामकृष्ण भांडारकर, चंदावरकर, गोखले, कृष्णराव अर्जुन

केळुस्कर, सी. के. बोले, वि. रा. शिंदे, सयाजीराव गायकवाड आदी। यह सभी महात्मा समाज का केवल केवल मतपरिवर्तन चाहते थे।

लेकिन महात्मा जोतिबा फूले और राजर्श्री शाहू महाराज का मत था की केवल सहानुभूति से अछुतों का उद्धार नही होगा, तो उसके लिए सुनिश्चित मार्ग से उच्च ,वर्णिये के विरोध में आवाज उठाना होगा। उसके लिए महात्मा जोतिबा फुले एवं राजर्श्री शाहू महाराज ने सामाजिक स्तर पर परिवर्तन के कार्य भी शुरू किए। महात्मा फुलेने १८५२ में दलित छात्रों के लिए स्कूल खुलाए और इसी समस्या पर कही किताबे भी लिखी। तथा शाहू महाराज ने जाँतियों के अनुसार अपने राज्य में छात्रावास की सुविधा, शिक्षा कि व्यवस्था तथा छात्र वृत्ती की व्यवस्था की।

महात्मा फुलेजी ने 'वेदाचार', 'जाँतिभेद सार' जैसे ग्रंथों का निर्माण किया। 'कथागीत' भी उसका ही सर्जन है। उनका Priest Craft Exposed यह प्रसिध्द ग्रंथ १८६९ में प्रकाशित हुआ। तथा सन १८७५ में 'दिनबन्धु' इस दैनिक पत्रिका शुरूवात की। सन १८८३ में 'शेतकऱ्याचा आसूड' यह ग्रंथ लिखा जिसका आगे चलकर अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया गया। फुलेजी केवल साहित्य के माध्यम से दलितों में चेतना जगाने के पक्ष में नही थै। तो इस कार्य के लिए उन्होंने कई संस्थाओं का निर्माण भी किया। जैसे 'मानव धर्म सभा', 'परमहंस सभा', 'सत्यशोधक समाज' आदी।

फुलेजी परंपराओं, रूढीयों, जाँतिप्रथा, अंधश्रद्धा, सतिप्रथा के कट्टर विरोधी थे और अस्पृश्यों को शिक्षा और नारी चेतना के सदैव्य पक्षधर रहै। उन्होंने ब्राम्हणों को सर्वोपरीता को ललकारा, और हिन्दू धर्मग्रंथों को अस्विकार किया। हिन्दू धर्म का एक चक्रिय शासन तोडने का उन्होंने अथक प्रयत्न किया। वे मानते थे की –"वेद कोई भगवान का सर्जन नही है।"[vii]हिंदू ब्राम्हणों के मुखर्तापूर्ण सुधारणा हेतु अंग्रेजों को भगवान ने ही भारत भेजा है।

महात्मा गांधीजी ने भी अस्पृश्यता निवारण के लिए कार्य किया। उन्होंने असहयोग आंदोलन, सविनय, अवज्ञा और १९४२ में भारत छोडो आदी आंदोलनों के माध्यम से भारतीय जनता में राष्ट्रीय शक्ति भर दी। उन्होंने हिन्दू धर्ममें अस्पृश्यता को कोई स्थान नहीं है। अस्पृश्यता हिन्दू धर्म पर लगा एक कलंक है। यदि अस्पृश्यता प्रथा न गई तो हिन्दू समाज और हिन्दू धर्म का अस्तित्व संकट में पड जायेगा और अस्पृश्यों को हरिजन नाम दिया।[viii] गांधीजी के दलित विषयक दृष्टिकोन और प्रवृत्तिओं को आज भी विविध दृष्टिकोनों से देखा जा रहा है। (१) गांधीजी को दलितों के सुधारक एवं हितचिंतक कहते है। (२) तो कुछ विव्दानों ने गांधीजी के प्रवृत्तियों को राजनीतिक प्रवृत्तियाँ कहते है। गांधीजी अस्पृश्यता नष्ट करना चाहते थे। मगर वेवर्णव्यवस्था के समर्थक थे। उसे हिन्दूत्व की रीढ मानते थै। उन्होंने हरिजन उद्धार अनेक योजनाएँ बनाई। मगर वह सर्वर्णों पर निर्भर थी। उन्होंने अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश का समर्थन तो किया किंतु वर्णगत पैत्रूकपेशे त्यागने का भी विरोध किया। गांधीजी दलितोद्धार के लिए वर्णव्यवस्था का विरोध साहस नही जुटा पाएँ। इ.स. १९३२ में पूना पैक्ट के बाद गांधीजी और बाबासाहबजी इन दोनों में मतभेद कम हो गए थे। किंतु यह भी सच है की जिस तरह गांधीजी ने कहा की, 'पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा।'[ix] उसी तरह कट्टर रूख जाँति-पाँति मिटाने के लिए नही अपनाया।

ऐसे ही राजनीतिक उथल-पुथल के बिच डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर दलितों के मसिहा के रूप में उभरे। जिन्होंने सही दिशा में आधुनिक भारत में दलितोत्थान में विविध सत्याग्रह, आंदोलनों, परिषदाओं एवं भाषणों के द्वारा अपना सक्रिय योगदान शुरू किया। जिससे उस काल की दलित, पिडित, शोषित जनता में नई शक्ति का उदय हुआ। उन्होंने लोगों के बिच चेतना जगना के लिए अनेक पत्रिकाए निर्माण की। अनेक ग्रंथो का निर्माण किया। अनायास ही उनके इस कार्यों का परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से मराठी तथा हिन्दी साहित्य पर प्रभाव पडा। जिसके परिणाम स्वरूप अनेक नवोदीत कथाकार, कवि, लेखक तथा रचनाकारों का निर्माण हुआ।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरजी के कार्यों का संक्षिप्त परिचय –

दलितों के मसीहा एवं बोधिसत्व बाबासाहब के पूर्व इतने सारे महात्माओं ने दलितोद्धार के लिए कार्य करने के बाद भी दलितों की स्थित में कोई ज्यादा सुधार नहीं हो सका। उनका सामाजिक स्थान, राजकिय स्थान, शैक्षिक स्थिती, आर्थिक संपन्नता और अन्य क्षेत्रों में अत्याधिक लाभ नही हो सका। अम्बेडकर पूर्व नेताओं के इस दिशा में किए कार्य सराहनीय नहीं रहे। क्योंकि इन नेताओं का परम लक्ष स्वतंत्रता प्राप्ति था। लेकीन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर समग्र मानवता की सर्वप्रकार की मुक्ति के अग्रही थे। बाबासाहब के परिवार पर संत कबिर का प्रभाव था। डॉ. बाबासाहब महात्मा जोतिबा फुले को अपना आदर्श एवं गुरू मानते थे। डॉ. अम्बेडकरजी ने अपने व्यक्तिगत जीवन में अस्पृश्यता कि पिडा को सहन किया था। इन्हीं कष्टों से जीवनभर जुझते रहे। अनेकों कठिनायों बीच अपना विद्या व्यासंग बनाए रखा था। इसलिए बाबासाहबजी ने दलितों को उनकी दासता का बोध कराया और उनकी मुक्ती की

स्पष्ट अवधारणा उनके समक्ष रखी। इसके लिए बाबासाहबजी ने अपने जीवन काल में ढेर सारे ग्रंथो का निर्माण किया।

डॉ. बाबासाहबजीने दलितों के मुक्ति के लिए विभिन्न आंदोलनों, सत्याग्रहो, परिषद, विभिन्न पत्रिकाओं का निर्माण किया। तथा विभिन्न विषयों पर ग्रंथों का निर्माण करते रहे। बाबासाहब अपने जीवनकाल में शिक्षा को अत्याधिक महत्व देते रहे। वे स्वयं अजीवन अध्ययन रत रहे थे। वह भी सुविधित है कि वे अपने अंतिम क्षणों तक लिखते रहे। उनके व्यक्तिगत ग्रंथालय में इतिहास विषयक २३०० ग्रंथ, महापुरूषों के जीवन सम्बधी १२०० ग्रंथो, भाषाविज्ञान ६३० ग्रंथ, साहित्य के १९०० ग्रंथ, अर्थशास्त्र के ३०० ग्रंथ, धर्मविषयक २००० ग्रंथ, मराठी साहित्य के ८०० ग्रंथ, बौद्ध साहित्य के २००० ग्रंथ, संस्कृत साहित्य के २००० ग्रंथ और युद्धविषयक ३०० ग्रंथ संग्रहित है। इसी शिक्षा एवं ग्रंथो के लगाव के कारण तथा शिक्षा का महत्व विषद करते हुए उन्होंने अस्पृश्यों को कहा था की, "शिका, संघटित व्हा आणि संघर्ष करा."आगे चलकर वे कहते है की, "मै कवि नही हु फिर भी मेरा जीवन खुद एक महाकाव्य नही है?"[x]

बाबासाहब अम्बेडकरजी ने अपने विचारों को जनता तक पहुचाने के लिए ३१ जनवरी १९२० में राजर्षी शाहू महाराज कि सहायता से 'मूकनायक' नामक पाक्षिक शुरू किया। अतः यहाँसे उनका पत्रकारिता के क्षेत्र में योगदान शुरू हुआ। मगर ये पत्रिका अनेक कठिनाईयों के बावजूद ज्यादह दिनों तक नही चल सकी। मूकनायक के व्यवस्थापन एवं संपादन कि प्रक्रिया से बाबीसाहब उतने संतुष्ट नही रहे। अतः मूकनायक को बंद करना पडा। इसके पश्चात ३ एप्रैल १९२७ में 'बहिष्कृत' भारत नामक पाक्षिक शुरू किया। उसका संपादन एवं वितरण व्यवस्था स्वयं बाबासाहब करते थे। आर्थिक विपन्नता के बावजूद यह बहुत कठिण कार्य था। लेकिन समाज के प्रति यह कर्तव्य मानकर करते रहे। इसके पिछे उद्देश केवल एक ही था की, अस्पृश्यों को उनके हक का एहसास कराना। उनपर होने वाले अन्याय एवं अत्याचारों को समाज के सामने लाना और इसीका जागरण कराना था। बहिष्कृत भारत से मानों महाराष्ट्र में स्थित समाज में एक प्रकार का तुफान आ गया। इसके साथ ही साथ २९ जून १९२८ में 'समता' पाक्षिक आरंभ किया तथा २४ नवम्बर १९३० में 'जनता' साप्ताहिक का आरंभ किया। अतः इन सभी पत्रकाओं के लेखों में केवल स्वाभिमान और क्रांतिकारी विचारधारा रही जो समाज में नवजागरण करने का काम करती रहे।

शैक्षिक सुविधा अस्पृश्यों को प्राप्त हो इसलिए डॉ. बाबासाहबजी ने पिपल्स एज्युकेशन सोसायटी का निर्माण किया। इस सोसायटी के माध्यम से बम्बई में सिध्दार्थ कॉलेज तथा औरंगाबाद में मिलिंद महाविद्यालय शुरू किया। ऐसे कहते है की, डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी के विभिन्न आंदोलनों का केन्द्रबिन्दू मिलिंद महाविद्यालय माना जाता था। तथा राजकिय क्षेत्र में दलितों को अधिकार प्राप्त हो इसलिए उन्होंने 'इनडिपेन्डेन्ट लेबर पार्टी' की स्थापना की। उन्होंने 'बहिष्कृत समाज', 'शिक्षण प्रसारक मंडळ', 'शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन' आदी कि स्थापना करके दलित चेतना को जगाया। सन १९५० इसवी में 'दलित साहित्य संघ' कि स्थापन की। इसके साथ ही २० जुलाई १९२४ को 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की, तथा १५ अगस्त १९२६ में स्वतंत्र मजुर पक्ष की स्थापना की। इस तरह ,विभिन्न सामाजिक एवं राजकीय संस्थाओं और संघटन के निर्माण के व्दारा दलित जनता के विकास के लिए प्रयास किए।

डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी ने अपने कूल जीवनकाल में पाँच सत्याग्रह किए। यह सभी सत्याग्रह इसलिए किए, क्योंकि स्वतंत्रता पूर्व काल में अस्पृश्यों के दयनीय स्थिती में सुधार लाना एवं अपनी आवश्यकताओं के लिए या पाणी के लिए स्पृश्यों की मर्जी पर निर्भर रहना। इसी के विरोध में आवाज उठाने के लिए सत्याग्रह का निश्चय किया। डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी ने महत्वपूर्ण पाँच सत्याग्रह किए। कोकण में महाड चवदार तालाब सत्याग्रह, तथा नाशिक के काळाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह, पूना का पार्वती मंदिर प्रवेश सत्याग्रह, अमरावती में अम्बादेवी मंदिर प्रवेश सत्याग्रह, मुखेड सत्याग्रह आदि इनमें से प्रमुख है। इन सत्याग्रहों में १९ या २० मार्च १९२७ में महाड के चवदार तालाब सत्याग्रह का नेतृत्व स्वयं बाबासाहबजी ने किया था। इस सत्याग्रहा उद्देश स्पष्ट करते हुए बाबासाहबजी ने कहा था की,'चवदार तळयाचे पाणी प्यायाने तुम्ही आम्ही अमर होऊ अशातला काही भाग नाही. आज पावेतो चवदार तळयाचे पाणी पाल्यो नव्हतो, तर तुम्ही आम्ही काही मेलो नव्हतो. चवदार तळयावर जावयाचे ते केवळ त्या तळयाचे पाणी पिण्याकरिता नाही. इतराप्रमाणे आम्ही ही माणसे आहोत हे सिद्ध करण्याकरीतांच. त्या तळयावर आपणास जावयाचे आहे म्हणजे ही सभा समतेची मुहूर्तमेढ रोवण्यासाठीच बोलाविलि आहे।'[xi] इसी समय उनके साथ उनके कई विश्वासपात्र कार्यकर्ता थे। नाशिक के काळाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह का मुख्य उद्देश्य यह था

की भारत में सभी अस्पृश्य हिन्दू यह हिन्दू संस्कृती एवं हिन्दू धर्म के ही थे।स्पृश्य हिन्दू जीन हिन्दू देवताओं का पूजन करते थे उसी देवताओं का अस्पृश्य भी पूजन करते थे। तो ऐसे अस्पृश्यों को देवता की पूजा एवं दर्शन के लिए मनाई क्यूँ? इसलिए यह सत्याग्रह हुआ। इसी तरह बाबासाहबजी ने अपने हर एक सत्याग्रह में वहाँ की सामाजिक समस्या को ध्यान में रखते हुए सत्याग्रह का आयोजन किया। इन पाच सत्याग्रहों में तीन सत्याग्रहों का नेतृत्व बाबासाहबजी ने स्वयं किया। तथा बाकी दो उनके विश्वासी कार्यकर्ताओं ने किए।

एक और डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी ने ऐसे सत्याग्रहों एवं आंदोलनो के माध्यम से कार्य किया तो दुसरी ओर माणगाँव परीषद, नागूपर बहिष्कृत परिषद, कुलाबा जिला बहिष्कृत परिषद महाड, येवला में व्याख्यान, मनमाड में अस्पृश्य रेलवे कामगार परिषद, महाड में शेतकरी परिषद, नागपूर की भारतीय दलित वर्ग परिषद तथा पंढरपूर की मातंग परिषद ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन करके लोगों में प्रबोधन करते और उनकी शक्ती को पुनः प्रज्वलित करते रहे। अनेक कार्यक्रमो में भाषण देकर अपनी भूमिका जनता तक पहुचाई तथा लन्दन में गोलमेज परिषद के निमित्त अपने लोगों की भूमिका सरकार तक पहूँचाने का कार्य किया।

इस प्रकार चाहे समाज, राजनीतिक क्षेत्र, कृषि शेत्र, मजदूर वर्ग, पिढित नारी आदी के लिए सक्रिय कार्य किया।

हिन्दी साहित्य में दलित चेतना –

दलित में केवल अछूत जाँति का उल्लेख करना उचित नही है। इसमें आर्थिक दृष्टि से पिछडे हुए लोगों का भी समावेश करना होगा। दलित की कोई विशेष जाती नही है, समाज का कोई भी मानव दलित नही हो सकता। दलित का मतलब सिर्फ अनुसूचित जाँति या अनुसूचित जनजाँति, वर्ण, धर्म, या देश नही है। 'बल्कि मनुष्य की पतितावस्था, दुरावस्था तथा उसकी लाचारी और शोषण, अधिकारों से वंचित आदि को देखा जाता है। सामाजिक और धार्मिक दृष्टी से जिसका शोषण होता है, स्वतंत्रता, समता और प्रगती से अपरिचित रहकर जो अपने मालिक की प्रामाणिक दासता निभाता है और जिसके जीवन में ज्ञान या प्रकाश अभाव में अज्ञान या अंधेरा छाया हुआ व्यक्ती दलित है।'

दलित मानवीय प्रगती में पिछडा हुआ और पिछे दबाया हुआ वर्ग है। अमेरिका में काला-गोरा रंगभेद की नीति आखिर में दलित के ही संदर्भ में है। अमेरिकन लोग भारतीय लोगों को काले रंग के बहिष्कृत दलित ही समजते है। आफ्रिका या आशियाई देशों में भी दलित एक या दुसरे स्वरूप में विद्यमान है। अतः इस दृष्टिकोन में दलित के अर्थ की व्यापकता विश्वात्मक है। इसमें किसी पाप-पुण्य, कर्म, भाग्य, पुर्नजन्म, जाँति के लिए कोई स्थान नही।

दलित चिंतकों ने समय के अनुसार दलित शब्द को परिभाषित करने का प्रयास किया। जैस जैसे जाँतियाँ टुटती है और वर्ग का उदय होता है। वैसे वैस दलित शब्द व्यापक बनता गया। लेकीन भारत में दलित का अर्थ आज भी संकुचित रहा है। यहाँ की आधी से अधिक आबादी आर्थिक दृष्टी से दलित ही है। भारत में १९५५ में कालेलकर कमिशन के रीपोर्ट में २३९९ जाँतियाँ और समुदाय को पिछडे वर्गों का नाम दिया। तो मंडल कमिशन ने ६० प्रतिशत से जादा लोग इसमें शामिल किए। और अनुसूचित जाँति या अस्पृश्यो की आबादी केवल १५ प्रतिशत है। लेकिन भारत के देहांतों में बसा हुआ जादातर हिन्दू समाज अस्पृश्यता का उदगम स्थान है।

डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी के विचारों का हिन्दी भाषा के साहित्य पर प्रभाव –

डॉ. बाबासाहबजी की जन्मभूमी भले ही मध्यप्रदेश इंदोर के पास महू में है। वह हिन्दी भाषिक क्षेत्र है। लेकिन उनकी कर्मभूमी पूरा महाराष्ट्र रही है, और इस कारण उन्होंने अपने पुरे जीवनकाल में जितने भी कार्य किए उसका प्रत्यक्ष रूप से मराठी भाषा एवं साहित्य पर प्रभाव पडा दिखाई देता है। उनके कार्यों के प्रभाव के कारण अनेक मराठी साहित्यिकों का जन्म हुआ और क्रांति से ओतप्रोत अन्याय, अत्याचार, दलन और पतनसे भरा कथा, कवितौं, उपन्यास, नाटक, आत्मचरित्र आदी अनेक प्रकार का साहित्य मराठी में निर्माण होने लगा। इसे देखते हुए मराठी साहित्य के आलोचकों ने इसे दलित साहित्य नाम दे दिया। अतः इनके पुरे साहित्य में स्वानुभूति के आधार पर इतिवृत्तांत्मक साहित्य निर्माण होता रहा। और यही प्रभाव धिरे-धिरे हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में भी दिखाई देने लगा।

डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी के पूर्व भी हिन्दी में दलित साहित्य की निर्मिती की प्रक्रिया सूक्ष्म रूप से चल रही थी। हिन्दी के संत कबीर, संत रैदास, दादू दयाल जैसे कवियों ने जाँति प्रथा के विरोध में आवाज उठाई थी। इसी बात पर कबीर जी अपने पद में कहते है की,

"जाँति न पुछो साधु की, पूछ लिजिए ज्ञान
मोल करो तलवार का, पडा रहने दो म्यान।"
तथा
"जाँति पाँति पुछे नही कोय,

हरि को भजे, सो हरी का होय।"

अतः संतो ने अपने तरिके से जाँति प्रथा का निर्मुलन करने के लिए प्रयास किया। हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य का उद्भव सितम्बर १९१४ कि सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित हीराडोंब की 'अछूत कि शिकायत' इस कवितासे मानी जाती है। हिन्दी के तमाम बडे कवियों ने जैसे - निराला, नागार्जून, मुक्तिबोध, केदारनाथ अग्रवाल, सुदामा पाण्डे धूमिल आदी ने दलित जीवन पर कवितायें रचि है। धूमिल की 'मोचिराम', नागार्जून की 'हरिजन गाथा' तो इस धारा की प्रतिनिधी रचनायें बनकर उभरी। श्री. माताप्रसाद ने हिन्दी काव्य में 'दलित काव्यधारा' पुस्तक में ऐसे शेकडो कविताएँ संकलित की है। अतः हर एक विधा के अनुसार हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य निम्ननुसार है –

हिन्दी का कथा साहित्य –

हिन्दी के कथा साहित्य में भी दलित जीवन को केंद्र में रखकर अनेक रचनाएँ रची गई। प्रेमचंद की 'सदगति', ठाकूर का 'कुआँ', 'कफन' तथा निराला जी 'कुल्ली भाट', 'चतुरी चमार' आदी अमृतलाल नागरकृत 'नाच्यौ बहुत गोपाल', जगदिशचंद्र गुप्त कृत 'धरती धन न अपना','नरकुंड के बास' तथा 'जमिन अपनी तो थी', गिरीराज किशोर कृत 'परिशिष्ठ', मधुकर सिंह कृत 'उत्तरगाथा', मनमोहक पाठक कृत 'गगनगठा गहराई', पुन्निसिंह कृत 'पाथर घाटी का शोक', जयप्रकाश कर्दम कृत 'छप्पर' आदी इसके साथ ही शिवमूर्ति, संजीव, हबीब कैफी, हृदयेश आदी के कहानीओं में दलित जीवन की पिडाई अंकित की गई है। इनके बाद ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, डॉ. श्योअर सिंह बेचैन, चमनलाल आदी के नाम आते है। जिन्होंने अपनी प्रस्तुति में एक प्रकार का नयापन एवं ताजगी लाने की कोशिश की।

हिन्दी का उपन्यास साहित्य –

सारिका और संचेतना ने दलित विशेषांक प्रकाशित किया। जिस से मराठी दलित साहित्यकारों का परिचय हुआ। कहानी, उपन्यांस, आत्मकथा आदी विधाओं में दलित रचनाये प्राप्त हुई। दलित रचनाकारों में जयप्रकाश कर्दम ने छप्पर उपन्यास लिखा। जो हिन्दी का पहला दलित साहित्य का उपन्यास है। 'जसतसभाई संवेरे'– सत्यप्रकाश, 'मुक्तिपर्व'– मोहनदास नैमिशराय, मन्नू भंडारीकृत 'महाभोज' आदी उपन्यास उल्लेखिनीय है। गत जीवन के अनुभवों को रचनात्मक अभिव्यक्ती देना एक रचनाकार को वैसेही वेदना और पिडा देता है। जैस वह उस अनुभव से प्रत्यक्ष गुजरा है।

हिन्दी का दलित आत्मकथन साहित्य –

हिन्दी के दलित साहित्य में आत्मकथन यह विधा अपनी त्रासदी को अभिव्यक्ति दे रही है। हिन्दी में बहुत सारे दलित लेखकों ने अपने आत्मकथन लिखे हैं। जैसे 'अपने अपने पिंजडे'– मोहनदास नैमिशराय, 'जूठन'– ओमप्रकाश वाल्मीकि, दोहरा अभिशाप – कौशल्या बैसंत्रि, कंधोपर बचपण– डॉ. श्योराज सिंह बेचैन आदी आत्मकथायें दलित जीवन के सरोकारों को समेटती है। तथा भारतीय जातीव्यवस्था, हिन्दी धर्म, जन्म-सिध्दांत पर प्रकाश उपस्थित किए।

हिन्दी कविता में दलित साहित्य –

हिन्दी कविता में सितम्बर १९१४ मे प्रकाशित सरस्वति पत्रिका में प्रकाशित हीरा डोम की 'अछूत की शिकायत' यह पहली दलित कविता मानी जाती है। इसके साथ ही 'कमल भारती अछूतानंद' को हिन्दी का पहला दलित कवि मानते है। माता प्रसाद की –'राजनीति की अर्धसतसई', लालचंद राई की 'मूक नही मेरी कवितायें', पुरूषोत्तम सत्यप्रेमी की 'सवालों के सूरज', सोहनलाल सुमनाक्षर कृत 'अंधा समाजा बहरे लोग', मोहनदास नैमिशराय कृत 'सफदर का बयान', जयप्रकाश कर्दम कृत "गूँगा नही,था मैं', मनोज कृत 'शोषित नामा', मलखानकृत 'सूनो ब्राम्हण', एन. सिंह कृत 'सतह से उठते हुए', ओम प्रकाश वाल्मीकि कृत 'बरस बहुत हो चूका' आदी कविताये उल्लेखनीय है। डॉ. एन. सिंह लिखते है "हिन्दी दलित कविता के लिए नई दिशायें खुल रही है और साथ ही मर्यादा भी स्पष्ट हो रही है। अतः सभी कवियों की एक ही प्रकार की संवेदन है। सच्चे अर्थों में कविताये अपमानीत पीढियों के उदर से पैदा हुई है।"

सारांश –

हिन्दी का यह साहित्य डॉ. बाबासाहब अम्बेडकरजी के विचारों से प्रेरणा लेकर सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, शोषण के विरोध में, अपनी आवाज बुलंद करता है। तथा शोषक वर्ग को अंतर्मुख होकर सोचने के लिए बाध्य करता है। समाज एक हिस्से को केवल अपमान अवहेलना, दारिद्र्य, अभाव, वेदना और पिढा भोगने के लिए बाध्य करता है। तथा सदियों तक सुख-सुविधायें सम्पत्ति और सत्ता को अपनेही हिस्से में रखने वाले वर्ण व्यवस्था की शातिर साजिशों का पर्दाफाश कर देता है। सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक मूल्यों की फिर से पडताल करने की आवश्यकता मेहसूस करता है और मानवता शर्म से डूब जाय ऐसी नीति, धर्म, रीति, रूढीयों को बनानेवाले और संवर्धन करनेवाले ब्राम्हणी समाज की चिरफाड करता है। दलित आत्मकथनों के माध्यम से एवं कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त वेदना, पिडा और विद्रोह वेदना में स्थित स्वर को प्रस्फूट्रित होने के लिए लालायित करता है। जो आज संघर्ष का तेजस्वरी स्वर के रूप में उभर रहा है। अतः ये स्वर निराशा के नही है आशा का है। जिसमें अपनी अस्मिता की खोज में निरंतन रचनात्मक आयामों को छू लेने का इसमें सामर्थ्य है।

संदर्भ -